International Journal of Humanities and Social Science Research
www.socialsciencejournal.in
ISSN: 2455-2070
Received: 16-06-2026, Accepted: 16-07-2026, Published: 31-07-2026
Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 190-196

कांट का कर्तव्यवाद और मानवाधिकारः एक दार्शनिक विश्लेषण

डॉ. नीतू कुमारी
वरिष्ठ सहायक प्राध्यापक, दर्शनशास्त्र विभाग, टी. एन. बी. कॉलेज, भागलपुर, तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर, बिहार, भारत

DOI: https://doi.org/10.66856/ijhssr.2026.12.3.12250

सारांश
इमैनुएल कांट का कर्तव्यवाद आधुनिक नैतिक दर्शन की एक महत्वपूर्ण विचारधारा है, जिसका आधार यह सिद्धांत है कि किसी कर्म की नैतिकता उसके परिणामों पर नहीं, बल्कि उसके पीछे निहित कर्तव्य, सद्भावना और नैतिक नियमों के पालन पर निर्भर करती है। कांट के अनुसार प्रत्येक मनुष्य अपने आप में एक साध्य है, इसलिए उसकी गरिमा, स्वतंत्रता और स्वायत्तता का सम्मान करना नैतिक कर्तव्य है। यही सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकारों की दार्शनिक आधारशिला के रूप में भी महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति की समानता, स्वतंत्रता, सम्मान और न्याय की रक्षा पर बल देते हैं। प्रस्तुत शोध–लेख में कांट के कर्तव्यवाद के मूल सिद्धांतों, विशेषतः श्रेणीबद्ध अनिवार्यता, नैतिक स्वायत्तता तथा मानव गरिमा की अवधारणा का विश्लेषण करते हुए मानवाधिकारों के साथ उसके अंतर्संबंधों का दार्शनिक अध्ययन किया गया है। साथ ही, समकालीन संदर्भ में मानवाधिकारों की चुनौतियों, सामाजिक न्याय, लोकतांत्रिक मूल्यों तथा वैश्विक नैतिक विमर्श के परिप्रेक्ष्य में कांट के विचारों की प्रासंगिकता और सीमाओं का भी आलोचनात्मक मूल्यांकन किया गया है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि कांट का कर्तव्यवाद आज भी मानवाधिकारों की सार्वभौमिकता, नैतिक उत्तरदायित्व और मानवीय गरिमा की स्थापना के लिए एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रदान करता है।

मुलशब्द: कांट, कर्तव्यवाद, मानवाधिकार, नैतिक दर्शन, श्रेणीबद्ध अनिवार्यता, मानव गरिमा, नैतिक स्वायत्तता, सामाजिक न्याय।

आधुनिक नैतिक दर्शन के इतिहास में जर्मन दार्शनिक इमैनुएल कांट का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट है। उन्होंने नैतिकता की ऐसी सार्वभौमिक अवधारणा प्रस्तुत की, जिसमें किसी कर्म की नैतिकता का निर्धारण उसके परिणामों या उपयोगिता के आधार पर नहीं, बल्कि उसके पीछे निहित कर्तव्य, सद्भावना, विवेक तथा सार्वभौमिक नैतिक नियमों के पालन के आधार पर किया जाता है।[1] कांट के अनुसार प्रत्येक मनुष्य एक बुद्धिसंपन्न, स्वायत्त एवं गरिमामय प्राणी है, जिसे कभी भी केवल साधन के रूप में नहीं, बल्कि सदैव अपने आप में एक साध्य के रूप में देखा जाना चाहिए। यही विचार आधुनिक मानवाधिकारों की दार्शनिक आधारशिला को सुदृढ़ करता है, क्योंकि मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति की जन्मजात गरिमा, समानता, स्वतंत्रता और न्यायपूर्ण जीवन के अधिकार को सार्वभौमिक रूप से स्वीकार करते हैं।[2] द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मानवाधिकारों की वैश्विक अवधारणा को संस्थागत रूप मिलने के बावजूद उसके मूल नैतिक आधार कांट के विचारों में स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं, जहाँ मानव गरिमा, नैतिक स्वायत्तता और सार्वभौमिक नैतिक उत्तरदायित्व को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। वर्तमान वैश्विक परिदृश्य में जब मानवता युद्ध, आतंकवाद, जातीय एवं धार्मिक हिंसा, सामाजिक और आर्थिक असमानता, लैंगिक भेदभाव, शरणार्थी संकट, डिजिटल निगरानी, कृत्रिम बुद्धिमत्ता (AI) की नैतिक चुनौतियों, जैव–प्रौद्योगिकी, पर्यावरणीय न्याय तथा मानवाधिकारों के निरंतर हो रहे उल्लंघनों जैसी जटिल समस्याओं का सामना कर रही है, तब कांट का कर्तव्यवाद केवल एक दार्शनिक सिद्धांत न रहकर नैतिक निर्णय, मानव गरिमा की रक्षा तथा न्यायपूर्ण और उत्तरदायी समाज के निर्माण के लिए एक प्रभावशाली वैचारिक आधार प्रस्तुत करता है।[3] उनका श्रेणीबद्ध अनिवार्यता का सिद्धांत यह प्रतिपादित करता है कि प्रत्येक व्यक्ति ऐसे नैतिक नियमों का पालन करे जिन्हें वह समस्त मानवता के लिए सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार कर सके। यह सिद्धांत मानवाधिकारों की सार्वभौमिकता, समानता, न्याय, परस्पर सम्मान और नैतिक उत्तरदायित्व की अवधारणा के साथ गहरा सामंजस्य स्थापित करता है।[4] प्रस्तुत शोध–लेख का उद्देश्य कांट के कर्तव्यवाद के मूल सिद्धांतों, विशेष रूप से सद्भावना, कर्तव्य, नैतिक स्वायत्तता, श्रेणीबद्ध अनिवार्यता तथा मानव गरिमा की अवधारणाओं का दार्शनिक विश्लेषण करते हुए मानवाधिकारों के साथ उनके अंतर्संबंधों, समकालीन प्रासंगिकता, व्यावहारिक उपयोगिता तथा आलोचनात्मक सीमाओं का अध्ययन करना है, ताकि यह स्पष्ट किया जा सके कि कांट का नैतिक दर्शन आज भी मानवाधिकारों की रक्षा, सामाजिक न्याय की स्थापना, लोकतांत्रिक मूल्यों के संवर्धन तथा एक मानवीय, न्यायपूर्ण और उत्तरदायी विश्व व्यवस्था के निर्माण के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रासंगिक दार्शनिक आधार प्रदान करता है।[5]

अनुसंधान उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–लेख का मुख्य उद्देश्य इमैनुएल कांट के कर्तव्यवाद का गहन दार्शनिक विश्लेषण करते हुए उसके मानवाधिकारों के साथ अंतर्संबंधों का समग्र अध्ययन करना है। इस अध्ययन के माध्यम से कांट के नैतिक दर्शन के मूल सिद्धांतों – जैसे सद्भावना, कर्तव्य, श्रेणीबद्ध अनिवार्यता, नैतिक स्वायत्तता तथा मानव गरिमा का विस्तार से विवेचन किया जाएगा और यह स्पष्ट किया जाएगा कि ये सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकारों की वैचारिक, नैतिक एवं दार्शनिक आधारशिला को किस प्रकार सुदृढ़ करते हैं। साथ ही, यह शोध इस बात का परीक्षण करेगा कि प्रत्येक मनुष्य को अपने आप में एक साध्य मानने का कांट का सिद्धांत मानव की समानता, स्वतंत्रता, सम्मान, न्याय, अधिकारों की सार्वभौमिकता तथा मानवीय गरिमा की रक्षा के लिए किस प्रकार आधार प्रदान करता है।[6] अध्ययन का उद्देश्य यह भी है कि मानवाधिकारों की अवधारणा को केवल संवैधानिक या विधिक व्यवस्था तक सीमित न मानकर उसके नैतिक और दार्शनिक पक्षों का भी सम्यक् विश्लेषण किया जाए। इसके अतिरिक्त, वर्तमान समय में सामाजिक एवं आर्थिक असमानता, जातीय और धार्मिक भेदभाव, लैंगिक असमानता, हिंसा, आतंकवाद, शरणार्थी संकट, पर्यावरणीय न्याय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति से उत्पन्न

नैतिक प्रश्नों, कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बढ़ते प्रभाव, डिजिटल युग में निजता के अधिकार तथा वैश्विक स्तर पर मानवाधिकारों के समक्ष उपस्थित नई चुनौतियों के संदर्भ में कांट के कर्तव्यवाद की प्रासंगिकता का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना भी इस शोध का महत्वपूर्ण उद्देश्य है।[7] यह अध्ययन कांट के नैतिक दर्शन की प्रमुख सीमाओं एवं उस पर विभिन्न दार्शनिकों द्वारा की गई आलोचनाओं का भी विवेचन करेगा, ताकि उसके व्यावहारिक पक्ष का संतुलित मूल्यांकन किया जा सके। अंततः इस शोध का उद्देश्य यह प्रतिपादित करना है कि कांट का कर्तव्यवाद केवल एक नैतिक सिद्धांत नहीं, बल्कि मानव गरिमा, नैतिक उत्तरदायित्व, सामाजिक न्याय, समानता, लोकतांत्रिक मूल्यों तथा मानवाधिकारों की प्रभावी सुरक्षा के लिए एक सशक्त दार्शनिक आधार है, जो समकालीन विश्व में अधिक न्यायपूर्ण, उत्तरदायी, समावेशी और मानवीय समाज के निर्माण के लिए आज भी अत्यंत प्रासंगिक एवं मार्गदर्शक सिद्ध होता है।[8]

अनुसंधान उद्देश्य

प्रस्तुत शोध–लेख का प्रमुख उद्देश्य इमैनुएल कांट के कर्तव्यवाद का व्यापक एवं आलोचनात्मक दार्शनिक विश्लेषण करते हुए उसके मानवाधिकारों के साथ अंतर्संबंधों का समग्र अध्ययन करना है। इस शोध के माध्यम से कांट के नैतिक दर्शन के मूल सिद्धांतों सद्भावना, कर्तव्य, श्रेणीबद्ध अनिवार्यता, नैतिक स्वायत्तता तथा मानव गरिमा का गहन विवेचन करते हुए यह स्पष्ट करने का प्रयास किया जाएगा कि ये सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकारों की वैचारिक, नैतिक एवं दार्शनिक आधारशिला को किस प्रकार सुदृढ़ करते हैं। अध्ययन का उद्देश्य यह भी है कि प्रत्येक मनुष्य को अपने आप में एक साध्य मानने की कांट की अवधारणा का विश्लेषण करते हुए यह समझा जाए कि समानता, स्वतंत्रता, सम्मान, न्याय तथा मानवीय गरिमा जैसे सार्वभौमिक मूल्यों की स्थापना में उसका क्या योगदान है।[9] इसके अतिरिक्त, यह शोध मानवाधिकारों की अवधारणा को केवल संवैधानिक अथवा विधिक अधिकारों तक सीमित न रखते हुए उसके नैतिक, दार्शनिक और मानवीय पक्षों का भी सम्यक् मूल्यांकन करेगा। अध्ययन में समकालीन विश्व के संदर्भ में सामाजिक एवं आर्थिक असमानता, जातीय और लैंगिक भेदभाव, धार्मिक असहिष्णुता, हिंसा, आतंकवाद, शरणार्थी संकट, पर्यावरणीय न्याय, वैज्ञानिक एवं तकनीकी विकास से उत्पन्न नैतिक प्रश्नों, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, डिजिटल निजता, वैश्विक न्याय तथा लोकतांत्रिक मूल्यों के संरक्षण जैसी चुनौतियों के संदर्भ में कांट के कर्तव्यवाद की प्रासंगिकता का परीक्षण किया जाएगा। साथ ही, कांट के नैतिक दर्शन की व्यावहारिक उपयोगिता, उसकी सीमाओं तथा उस पर विभिन्न दार्शनिकों द्वारा प्रस्तुत आलोचनाओं का संतुलित एवं वस्तुनिष्ठ विश्लेषण भी किया जाएगा, ताकि उसके सिद्धांतों की वास्तविक प्रभावशीलता का सम्यक् आकलन किया जा सके।[10] इस शोध का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य यह भी है कि नैतिकता और मानवाधिकारों के मध्य विद्यमान गहरे संबंध को स्पष्ट करते हुए यह प्रतिपादित किया जाए कि मानवाधिकारों की प्रभावी सुरक्षा केवल विधिक व्यवस्थाओं या राज्य की नीतियों से संभव नहीं है, बल्कि उसके लिए प्रत्येक व्यक्ति, समाज और राज्य में नैतिक उत्तरदायित्व, मानवीय संवेदनशीलता तथा मानव गरिमा के प्रति सम्मान की भावना का विकास भी अनिवार्य है। अंततः यह अध्ययन इस निष्कर्ष तक पहुँचने का प्रयास करेगा कि कांट का कर्तव्यवाद आज भी मानवाधिकारों की सार्वभौमिकता, सामाजिक न्याय, नैतिक उत्तरदायित्व, लोकतांत्रिक मूल्यों, मानवीय गरिमा तथा शांतिपूर्ण, समावेशी और न्यायपूर्ण विश्व व्यवस्था के निर्माण के लिए एक अत्यंत सशक्त, प्रासंगिक और स्थायी दार्शनिक आधार प्रदान करता है।[11]

अनुसंधान पद्धति

प्रस्तुत शोध–लेख में वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, व्याख्यात्मक तथा तुलनात्मक अनुसंधान पद्धति का समन्वित रूप से उपयोग किया गया है। इस अध्ययन का उद्देश्य इमैनुएल कांट के कर्तव्यवाद तथा मानवाधिकार की अवधारणा के मध्य दार्शनिक संबंधों का गहन एवं समालोचनात्मक विश्लेषण करना है। अध्ययन मुख्यतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है, जिनमें कांट के मूल ग्रंथों के प्रामाणिक अनुवाद, दर्शनशास्त्र संबंधी मानक पुस्तकें, शोध–लेख, शोध–प्रबंध, राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय शोध–पत्रिकाएँ, विश्वसनीय संदर्भ ग्रंथ तथा मानवाधिकार से संबंधित संवैधानिक और अंतरराष्ट्रीय दस्तावेजों का अध्ययन किया गया है।[12] अनुसंधान के दौरान कांट द्वारा प्रतिपादित कर्तव्य, सद्भावना, नैतिक नियम, सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांत, स्वायत्तता, मानव गरिमा तथा व्यक्ति को साध्य मानने जैसी प्रमुख अवधारणाओं का क्रमबद्ध विश्लेषण किया गया है तथा यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि ये सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकार की अवधारणा के निर्माण और विकास में किस प्रकार वैचारिक आधार प्रदान करते हैं। अध्ययन में दार्शनिक विश्लेषण की पद्धति के माध्यम से कांट के नैतिक दर्शन की मूल मान्यताओं का परीक्षण किया गया है, जबकि तुलनात्मक दृष्टिकोण अपनाकर उनके विचारों की आधुनिक मानवाधिकार विमर्श, लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय, समानता, स्वतंत्रता, संवैधानिक व्यवस्था तथा समकालीन नैतिक चुनौतियों के संदर्भ में समीक्षा की गई है।[13] साथ ही, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, पर्यावरणीय उत्तरदायित्व, वैश्वीकरण, डिजिटल अधिकार, लैंगिक समानता तथा मानवीय गरिमा जैसे समकालीन प्रश्नों के आलोक में कांट के कर्तव्यवाद की प्रासंगिकता का भी विवेचन किया गया है। अनुसंधान के समस्त निष्कर्ष तार्किक विश्लेषण, आलोचनात्मक विवेचना, ऐतिहासिक संदर्भों तथा प्रामाणिक स्रोतों के आधार पर प्रस्तुत किए गए हैं, जिससे अध्ययन की वस्तुनिष्ठता, प्रामाणिकता तथा शैक्षणिक विश्वसनीयता सुनिश्चित हो सके। इस प्रकार प्रस्तुत अनुसंधान पद्धति कांट के कर्तव्यवाद और मानवाधिकार के मध्य अंतर्संबंधों को दार्शनिक, नैतिक तथा समकालीन परिप्रेक्ष्य में समग्र रूप से समझने और उनका संतुलित मूल्यांकन करने का आधार प्रदान करती है।[14]

कांट का नैतिक दर्शन

इमैनुएल कांट (1724–1804) आधुनिक पाश्चात्य दर्शन के सर्वाधिक प्रभावशाली दार्शनिकों में से एक हैं, जिन्होंने नैतिक दर्शन को तर्क, कर्तव्य और सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांतों के आधार पर एक नया स्वरूप प्रदान किया। कांट के अनुसार नैतिकता का आधार न तो मनुष्य की इच्छाएँ हैं, न भावनाएँ, न सुख की प्राप्ति और न ही किसी कार्य के परिणामय बल्कि नैतिकता का वास्तविक आधार कर्तव्य है। उनका मानना था कि किसी कर्म का नैतिक मूल्य उसके परिणाम से नहीं, बल्कि उस कर्म के पीछे निहित नैतिक उद्देश्य और कर्तव्य–बोध से निर्धारित होता है। यदि कोई व्यक्ति केवल लाभ, भय, पुरस्कार या सामाजिक प्रशंसा की अपेक्षा से कोई कार्य करता है, तो वह नैतिक दृष्टि से श्रेष्ठ नहीं माना जा सकता।[15] इसके विपरीत, यदि कोई व्यक्ति केवल इसलिए किसी कार्य को करता है क्योंकि वह उसे अपना नैतिक कर्तव्य मानता है, तभी वह कर्म वास्तव में नैतिक कहलाता है। इस प्रकार कांट ने नैतिकता को व्यक्तिगत स्वार्थ, उपयोगिता और परिस्थितियों से ऊपर उठाकर सार्वभौमिक नैतिक नियमों पर आधारित किया। कांट के नैतिक दर्शन का सबसे महत्वपूर्ण आधार सद्भावना है। उनके अनुसार संसार में केवल सद्भावना ही ऐसी वस्तु है जिसे बिना किसी शर्त के पूर्णतः शुभ माना जा सकता है।[16] धन, शक्ति, बुद्धि, प्रतिभा या साहस जैसे गुण तभी कल्याणकारी हैं जब उनका उपयोग सद्भावना के साथ किया

जाएय अन्यथा वे विनाशकारी भी सिद्ध हो सकते हैं। सद्भावना वह नैतिक प्रवृत्ति है जो मनुष्य को केवल कर्तव्य के प्रति सम्मान के कारण सही कार्य करने के लिए प्रेरित करती है। इसलिए कांट के अनुसार किसी कर्म की नैतिक श्रेष्ठता उसके परिणामों में नहीं, बल्कि उस सद्भावना में निहित होती है जिसके आधार पर वह कर्म किया गया है। यही कारण है कि उन्होंने नैतिक जीवन में आत्मसंयम, विवेक, ईमानदारी और कर्तव्यनिष्ठा को सर्वोच्च स्थान दिया।[17]

कांट के नैतिक दर्शन की केंद्रीय अवधारणा निरपेक्ष आज्ञा है। इसका अर्थ है ऐसा नैतिक नियम जो प्रत्येक व्यक्ति पर समान रूप से, बिना किसी अपवाद के, लागू होता है। कांट का प्रसिद्ध सिद्धांत है कि मनुष्य को केवल उसी नियम के अनुसार कार्य करना चाहिए जिसे वह यह स्वीकार कर सके कि वही नियम समस्त मानव समाज के लिए सार्वभौमिक नियम बन जाए।[18] अर्थात यदि कोई कार्य ऐसा है जिसे सभी लोग अपनाएँ और उससे समाज में नैतिक व्यवस्था बनी रहे, तभी वह कार्य नैतिक है। उदाहरण के लिए, यदि झूठ बोलना सामान्य नियम बन जाए तो समाज में विश्वास समाप्त हो जाएगाय इसलिए सत्य बोलना नैतिक कर्तव्य है। इसी प्रकार चोरी, हिंसा, छल, शोषण और अन्याय इसलिए अनैतिक हैं क्योंकि उन्हें सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।[19] कांट ने मानव गरिमा को अपने नैतिक दर्शन का मूल आधार माना। उनके अनुसार प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक उद्देश्य है, किसी अन्य उद्देश्य की प्राप्ति का मात्र साधन नहीं। इसलिए किसी भी व्यक्ति का उपयोग केवल अपने स्वार्थ या लाभ के लिए करना नैतिक रूप से अनुचित है। प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता, सम्मान, समानता और स्वायत्तता का आदर करना प्रत्येक मनुष्य का नैतिक दायित्व है। यही विचार आगे चलकर आधुनिक मानवाधिकार, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय और संवैधानिक शासन की दार्शनिक आधारशिला बना। मानव की गरिमा और समान नैतिक मूल्य की यह अवधारणा आज भी मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा तथा विभिन्न संवैधानिक व्यवस्थाओं में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है।[20]

कांट के अनुसार मनुष्य एक विवेकशील और स्वायत्त प्राणी है, जो स्वयं अपने नैतिक नियमों का निर्धारण करने में सक्षम है। नैतिक आचरण किसी बाहरी भय, दंड, पुरस्कार या धार्मिक आदेश पर आधारित नहीं होना चाहिए, बल्कि व्यक्ति के अंतःकरण और विवेक से उत्पन्न होना चाहिए। इस दृष्टि से उन्होंने नैतिक स्वतंत्रता को आत्म–अनुशासन के रूप में परिभाषित किया।[21] उनके अनुसार वास्तविक स्वतंत्रता मनमानी करने की नहीं, बल्कि विवेकपूर्ण नैतिक नियमों का स्वेच्छा से पालन करने की क्षमता है। इस प्रकार स्वतंत्रता और कर्तव्य एक–दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं। समकालीन संदर्भ में कांट का नैतिक दर्शन अत्यंत प्रासंगिक है।[22] वर्तमान युग में जब मानवता कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, पर्यावरणीय संकट, डिजिटल गोपनीयता, मानवाधिकारों के उल्लंघन, आर्थिक असमानता, युद्ध, हिंसा और नैतिक मूल्यों के ह्रास जैसी जटिल चुनौतियों का सामना कर रही है, तब कांट का कर्तव्य–आधारित नैतिक दृष्टिकोण मानव गरिमा, नैतिक उत्तरदायित्व, न्याय, समानता और सार्वभौमिक नैतिकता के सिद्धांतों को सुदृढ़ आधार प्रदान करता है।[23] उनका नैतिक दर्शन यह संदेश देता है कि कोई भी वैज्ञानिक, तकनीकी, राजनीतिक या आर्थिक प्रगति तभी सार्थक है जब वह मानव गरिमा, नैतिक कर्तव्य और सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों के अनुरूप हो। इसलिए कांट का नैतिक दर्शन केवल अठारहवीं शताब्दी का दार्शनिक सिद्धांत नहीं है, बल्कि आज भी न्यायपूर्ण, मानवीय, उत्तरदायी और मूल्य–आधारित समाज के निर्माण के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण दार्शनिक आधार बना हुआ है।[24]

कर्तव्यवाद

कर्तव्यवाद नैतिक दर्शन की एक अत्यंत महत्वपूर्ण और प्रभावशाली विचारधारा है, जिसके अनुसार किसी भी कर्म की नैतिकता का मूल्यांकन उसके परिणाम, लाभ, सुख, उपयोगिता अथवा व्यक्तिगत हित के आधार पर नहीं, बल्कि इस आधार पर किया जाता है कि वह कर्म नैतिक कर्तव्य के अनुरूप है या नहीं। इस सिद्धांत का सर्वाधिक व्यवस्थित प्रतिपादन जर्मन दार्शनिक इमैनुएल कांट ने किया, जिन्होंने यह प्रतिपादित किया कि नैतिक जीवन का वास्तविक आधार मनुष्य का विवेक, नैतिक नियमों के प्रति सम्मान तथा कर्तव्य–बोध है।[25] कांट के अनुसार कोई भी कार्य तभी नैतिक कहलाता है जब वह केवल कर्तव्य की भावना से किया जाए, न कि पुरस्कार प्राप्त करने, दंड से बचने, सामाजिक प्रतिष्ठा अर्जित करने या किसी प्रकार का व्यक्तिगत लाभ प्राप्त करने के उद्देश्य से। उनके मतानुसार यदि कोई व्यक्ति सत्य बोलता है, न्याय करता है अथवा दूसरों की सहायता करता है केवल इसलिए कि उससे उसे लाभ मिलेगा, तो उस कर्म का नैतिक मूल्य सीमित हो जाता हैय किंतु यदि वही कार्य केवल इस विश्वास के साथ किया जाए कि ऐसा करना उसका नैतिक कर्तव्य है, तब वह वास्तविक अर्थों में नैतिक कर्म माना जाएगा। कांट ने कर्तव्यवाद का आधार निरपेक्ष नैतिक आज्ञा को माना, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को ऐसा आचरण करना चाहिए जिसे वह समस्त मानव समाज के लिए सार्वभौमिक नैतिक नियम के रूप में स्वीकार कर सके। इसका आशय यह है कि नैतिक नियम व्यक्ति, समय, स्थान अथवा परिस्थितियों के अनुसार नहीं बदलते, बल्कि वे सभी मनुष्यों पर समान रूप से लागू होते हैं।[26] इसी कारण सत्य, न्याय, ईमानदारी, वचनपालन, मानव गरिमा का सम्मान, समानता और उत्तरदायित्व जैसे मूल्य सार्वभौमिक नैतिक कर्तव्य माने जाते हैं। कांट ने यह भी प्रतिपादित किया कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक साध्य है, उसे कभी भी किसी अन्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए मात्र साधन के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए। इसलिए प्रत्येक व्यक्ति की स्वतंत्रता, गरिमा, स्वायत्तता और अधिकारों का सम्मान करना प्रत्येक मनुष्य तथा राज्य का नैतिक दायित्व है।[27] यही सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकार, लोकतंत्र, विधि का शासन, सामाजिक न्याय और संवैधानिक मूल्यों की दार्शनिक आधारशिला बनता है। समकालीन युग में जब मानवता कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, पर्यावरणीय संकट, डिजिटल अधिकार, प्रशासनिक पारदर्शिता, सामाजिक असमानता, युद्ध, आतंकवाद तथा मानवाधिकारों के उल्लंघन जैसी जटिल चुनौतियों का सामना कर रही है, तब कर्तव्यवाद नैतिक निर्णयों के लिए एक सुदृढ़ और सार्वभौमिक मानदंड प्रस्तुत करता है। यह व्यक्ति, समाज और राज्य को यह प्रेरणा देता है कि प्रत्येक निर्णय केवल तात्कालिक लाभ या परिणाम को ध्यान में रखकर नहीं, बल्कि न्याय, सत्य, मानव गरिमा, उत्तरदायित्व और सार्वभौमिक नैतिक मूल्यों के आधार पर लिया जाए। इस प्रकार कर्तव्यवाद केवल एक दार्शनिक सिद्धांत नहीं, बल्कि नैतिक आचरण, उत्तरदायी नागरिकता, मानवाधिकारों की सुरक्षा, सामाजिक समरसता तथा न्यायपूर्ण और मूल्य–आधारित समाज के निर्माण का एक व्यापक और स्थायी वैचारिक आधार है।[28]

श्रेणीब आज्ञा

श्रेणीबद्ध आज्ञा इमैनुएल कांट के नैतिक दर्शन और कर्तव्यवाद का केंद्रीय सिद्धांत है, जिसे उन्होंने सार्वभौमिक नैतिकता का सर्वोच्च आधार माना। कांट के अनुसार नैतिक नियम किसी व्यक्ति की इच्छाओं, भावनाओं, परिस्थितियों, स्वार्थ या परिणामों पर निर्भर नहीं होते, बल्कि वे ऐसे सार्वभौमिक सिद्धांत होते हैं जिनका पालन प्रत्येक विवेकशील मनुष्य के लिए हर परिस्थिति में अनिवार्य है। इसी सार्वभौमिक नैतिक नियम को कांट ने श्रेणीबद्ध आज्ञा कहा। इसका मूल अर्थ यह है कि मनुष्य केवल उसी

सिद्धांत के अनुसार कार्य करे जिसे वह यह स्वीकार कर सके कि वही सिद्धांत समस्त मानव समाज के लिए सार्वभौमिक नियम बन जाए।[29] यदि कोई व्यक्ति ऐसा कार्य करता है जिसे सभी लोग अपनाएँ और उससे समाज में नैतिक व्यवस्था, विश्वास और न्याय बना रहे, तभी वह कार्य नैतिक माना जाएगा। उदाहरण के लिए, यदि प्रत्येक व्यक्ति झूठ बोलने लगे, वचनभंग करे या छल–कपट को सामान्य व्यवहार बना ले, तो समाज में विश्वास, न्याय और सामाजिक व्यवस्था समाप्त हो जाएगीय इसलिए सत्य बोलना, वचन का पालन करना, न्याय करना तथा दूसरों के अधिकारों का सम्मान करना प्रत्येक व्यक्ति का सार्वभौमिक नैतिक कर्तव्य है।[30] कांट ने श्रेणीबद्ध आज्ञा का एक अन्य महत्वपूर्ण रूप यह भी बताया कि प्रत्येक मनुष्य को स्वयं में एक साध्य माना जाए, कभी भी केवल किसी अन्य उद्देश्य की प्राप्ति का साधन नहीं। इसका तात्पर्य है कि प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता, समानता और स्वायत्तता का सम्मान करना नैतिक रूप से अनिवार्य है। यही सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकार, लोकतंत्र, विधि के शासन, सामाजिक न्याय तथा संवैधानिक मूल्यों का दार्शनिक आधार बनता है। समकालीन संदर्भ में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, पर्यावरण संरक्षण, प्रशासनिक उत्तरदायित्व, डिजिटल गोपनीयता तथा वैश्विक न्याय जैसे क्षेत्रों में भी श्रेणीबद्ध आज्ञा का विशेष महत्व है, क्योंकि यह प्रत्येक निर्णय को सार्वभौमिक नैतिक मानकों, मानव गरिमा, उत्तरदायित्व और न्याय के आधार पर परखने की प्रेरणा देती है। इस प्रकार श्रेणीबद्ध आज्ञा केवल कांट के नैतिक दर्शन का मूल सिद्धांत ही नहीं, बल्कि सार्वभौमिक नैतिकता, मानवाधिकारों की रक्षा तथा न्यायपूर्ण और मानवीय समाज के निर्माण का एक स्थायी दार्शनिक आधार भी है।[31]

मानव गरिमा एवं स्वायत्तता

मानव गरिमा एवं स्वायत्तता इमैनुएल कांट के नैतिक दर्शन और कर्तव्यवाद के सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांतों में से एक है। कांट के अनुसार प्रत्येक मनुष्य अपने आप में एक स्वतंत्र, विवेकशील, नैतिक तथा मूल्यवान अस्तित्व है, इसलिए उसे कभी भी केवल किसी अन्य व्यक्ति, संस्था, राज्य या समाज के उद्देश्य की पूर्ति के साधन के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि स्वयं में एक साध्य के रूप में सम्मान दिया जाना चाहिए। उनका मानना था कि मनुष्य की गरिमा उसके धन, पद, जाति, धर्म, लिंग, शक्ति, सामाजिक स्थिति या उपलब्धियों से नहीं, बल्कि उसकी विवेकशीलता, नैतिक निर्णय लेने की क्षमता तथा स्वतंत्र इच्छा से निर्धारित होती है।[32] यही कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति समान सम्मान, स्वतंत्रता और नैतिक अधिकारों का अधिकारी है। कांट के अनुसार स्वायत्तता का अर्थ है कि मनुष्य अपने विवेक और नैतिक चेतना के आधार पर स्वयं अपने आचरण का निर्धारण करने में सक्षम हो तथा बाहरी दबाव, भय, लालच या स्वार्थ के स्थान पर नैतिक कर्तव्य और सार्वभौमिक नैतिक नियमों के अनुसार निर्णय ले।[33] वास्तविक स्वतंत्रता मनमानी करने की नहीं, बल्कि नैतिक नियमों का स्वेच्छा से पालन करने की क्षमता है। इस प्रकार मानव गरिमा और स्वायत्तता एक–दूसरे के पूरक सिद्धांत हैं, क्योंकि बिना स्वायत्तता के गरिमा की रक्षा संभव नहीं और बिना गरिमा के स्वतंत्रता का कोई नैतिक महत्व नहीं रह जाता। कांट का यह सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकार, लोकतंत्र, विधि का शासन, सामाजिक न्याय, समानता तथा संवैधानिक मूल्यों की आधारशिला माना जाता है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा में प्रत्येक व्यक्ति की समान गरिमा, स्वतंत्रता और अधिकारों को जो सर्वोच्च स्थान दिया गया है, उसकी दार्शनिक प्रेरणा कांट के इसी विचार में निहित है। समकालीन युग में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, चिकित्सा नैतिकता, डिजिटल गोपनीयता, लैंगिक समानता, सामाजिक समावेशन, विकलांग व्यक्तियों के अधिकार तथा पर्यावरणीय न्याय जैसे विषयों में भी मानव गरिमा और स्वायत्तता की अवधारणा अत्यंत प्रासंगिक हो गई है।[34] यह सिद्धांत इस बात पर बल देता है कि किसी भी वैज्ञानिक, तकनीकी, आर्थिक अथवा राजनीतिक निर्णय का अंतिम उद्देश्य मानव गरिमा की रक्षा, व्यक्ति की स्वतंत्रता का सम्मान तथा उसके नैतिक और सामाजिक अधिकारों का संरक्षण होना चाहिए। इसलिए मानव गरिमा एवं स्वायत्तता केवल कांट के नैतिक दर्शन का मूल तत्व ही नहीं, बल्कि एक न्यायपूर्ण, लोकतांत्रिक, समावेशी और मानव–केंद्रित समाज की स्थापना का सार्वभौमिक दार्शनिक आधार भी है।[35]

मानवाधिकार की अवधारणा

मानवाधिकार से अभिप्राय उन मूलभूत, सार्वभौमिक, अविच्छिन्न तथा जन्मसिद्ध अधिकारों से है, जो प्रत्येक व्यक्ति को केवल मानव होने के कारण प्राप्त होते हैं। ये अधिकार किसी राज्य, सरकार, समाज अथवा संस्था द्वारा प्रदान किए गए विशेषाधिकार नहीं हैं, बल्कि मानव की गरिमा, स्वतंत्रता, समानता और व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए अनिवार्य नैतिक एवं विधिक अधिकार हैं। मानवाधिकार का मूल आधार यह है कि सभी मनुष्य जन्म से स्वतंत्र, समान और सम्मान के अधिकारी हैं तथा उनके साथ जाति, धर्म, लिंग, भाषा, रंग, राष्ट्रीयता, संस्कृति, आर्थिक स्थिति या किसी अन्य आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता।36 मानवाधिकारों में जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, समानता का अधिकार, शिक्षा का अधिकार, अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, विचार एवं धर्म की स्वतंत्रता, न्याय प्राप्त करने का अधिकार, गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार, कार्य का अधिकार, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य, सांस्कृतिक भागीदारी तथा शोषण और उत्पीड़न से संरक्षण जैसे अनेक अधिकार सम्मिलित हैं।[37] आधुनिक मानवाधिकार की अवधारणा का विकास प्राकृतिक अधिकारों, मानव गरिमा, सामाजिक अनुबंध, लोकतंत्र तथा नैतिक दर्शन के सिद्धांतों के आधार पर हुआ, जिसमें इमैनुएल कांट के मानव गरिमा, स्वायत्तता और कर्तव्य संबंधी विचारों का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा। कांट के अनुसार प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक साध्य है, इसलिए उसके सम्मान और स्वतंत्रता की रक्षा प्रत्येक व्यक्ति और राज्य का नैतिक कर्तव्य है।[38] द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद मानवाधिकारों की आवश्यकता और भी अधिक स्पष्ट हुई, जिसके परिणामस्वरूप 10 दिसंबर 1948 को संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा को स्वीकार किया गया। इस घोषणा ने मानवाधिकारों को वैश्विक स्तर पर मान्यता प्रदान करते हुए प्रत्येक राष्ट्र को इनके संरक्षण और संवर्धन का दायित्व सौंपा। भारतीय संविधान भी मानवाधिकारों की भावना पर आधारित है, जिसमें मौलिक अधिकारों, राज्य के नीति–निर्देशक तत्वों तथा मौलिक कर्तव्यों के माध्यम से प्रत्येक नागरिक की गरिमा, समानता, स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय को सुनिश्चित करने का प्रयास किया गया है। समकालीन युग में मानवाधिकारों का दायरा और अधिक व्यापक हो गया है, जिसमें महिलाओं, बच्चों, अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, दिव्यांगजनों, वृद्धजनों, अल्पसंख्यकों, शरणार्थियों तथा लैंगिक विविधता वाले समुदायों के अधिकारों के साथ–साथ पर्यावरणीय अधिकार, डिजिटल गोपनीयता, सूचना का अधिकार, जैव–नैतिकता, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जलवायु न्याय तथा सतत विकास से संबंधित अधिकार भी सम्मिलित किए जा रहे हैं। इस प्रकार मानवाधिकार की अवधारणा केवल व्यक्ति की स्वतंत्रता और अधिकारों तक सीमित नहीं है, बल्कि यह मानव गरिमा, सामाजिक न्याय, समान अवसर, विधि के शासन, लोकतांत्रिक मूल्यों, नैतिक उत्तरदायित्व और विश्वबंधुत्व पर आधारित ऐसी व्यापक व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करती है, जिसका उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानपूर्ण, सुरक्षित, न्यायपूर्ण और समृद्ध जीवन उपलब्ध कराना तथा एक मानवीय, समावेशी और लोकतांत्रिक समाज की स्थापना करना है।[39]

कांट और आधुनिक मानवाधिकार

इमैनुएल कांट का नैतिक दर्शन आधुनिक मानवाधिकार की दार्शनिक आधारशिलाओं में से एक माना जाता है। यद्यपि कांट ने प्रत्यक्ष रूप से आधुनिक अर्थों में ष्मानवाधिकारष् की संकल्पना प्रस्तुत नहीं की, फिर भी उनके द्वारा प्रतिपादित मानव गरिमा, स्वायत्तता, समानता, स्वतंत्रता, नैतिक कर्तव्य तथा सार्वभौमिक नैतिक नियमों के सिद्धांतों ने आधुनिक मानवाधिकार विचारधारा के निर्माण और विकास पर गहरा प्रभाव डाला। कांट के अनुसार प्रत्येक मनुष्य केवल इसलिए सम्मान और गरिमा का अधिकारी है क्योंकि वह एक विवेकशील, नैतिक तथा स्वायत्त प्राणी है। उन्होंने स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया कि किसी भी व्यक्ति का उपयोग केवल किसी अन्य उद्देश्य की प्राप्ति के साधन के रूप में नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक साध्य है। यही सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकारों के उस मूल विचार का आधार है, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता और समानता का सम्मान किया जाना अनिवार्य है।[40] कांट की श्रेणीबद्ध आज्ञा यह निर्देश देती है कि मनुष्य केवल उसी नैतिक नियम के अनुसार कार्य करे जिसे वह समस्त मानव समाज के लिए सार्वभौमिक नियम के रूप में स्वीकार कर सके। इस सिद्धांत ने समानता, न्याय, भेदभाव–रहित व्यवहार तथा विधि के समक्ष समान संरक्षण जैसे आधुनिक मानवाधिकार मूल्यों को दार्शनिक आधार प्रदान किया। कांट का यह विश्वास कि प्रत्येक व्यक्ति अपने विवेक के आधार पर नैतिक निर्णय लेने में सक्षम है, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, अंतरात्मा की स्वतंत्रता तथा आत्मनिर्णय के अधिकार जैसी अवधारणाओं को भी सुदृढ़ करता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरांत जब विश्व समुदाय ने मानव गरिमा की रक्षा और मानवाधिकारों की सार्वभौमिक मान्यता की आवश्यकता को स्वीकार किया, तब संयुक्त राष्ट्र द्वारा 1948 में अंगीकृत मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा में निहित अनेक सिद्धांत – जैसे मानव की अंतर्निहित गरिमा, समान अधिकार, स्वतंत्रता, न्याय और सार्वभौमिकता कांट के नैतिक दर्शन से गहराई से प्रभावित दिखाई देते हैं। भारतीय संविधान में निहित मौलिक अधिकार, समानता का अधिकार, जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार, गरिमापूर्ण जीवन का अधिकार तथा सामाजिक न्याय की अवधारणा भी कांट के मानव–केंद्रित नैतिक दृष्टिकोण के अनुरूप मानी जा सकती है।[41] समकालीन युग में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, डिजिटल गोपनीयता, पर्यावरणीय न्याय, लैंगिक समानता, शरणार्थियों के अधिकार तथा वैश्विक मानवाधिकार संरक्षण जैसे विषयों पर होने वाले विमर्श में भी कांट के सिद्धांत अत्यंत प्रासंगिक बने हुए हैं, क्योंकि वे प्रत्येक निर्णय के केंद्र में मानव गरिमा, नैतिक उत्तरदायित्व और सार्वभौमिक न्याय को स्थापित करते हैं। इस प्रकार कांट का नैतिक दर्शन केवल अठारहवीं शताब्दी का दार्शनिक चिंतन नहीं है, बल्कि आधुनिक मानवाधिकारों की वैचारिक संरचना, लोकतांत्रिक मूल्यों, विधि के शासन तथा न्यायपूर्ण और मानव–केंद्रित विश्व व्यवस्था के निर्माण का एक सुदृढ़ और स्थायी दार्शनिक आधार है।[42]

भारतीय दार्शनिक दृष्टिकोण से तुलनात्मक अध्ययन

कांट के कर्तव्यवाद और मानवाधिकार की अवधारणा का भारतीय दार्शनिक परंपरा के साथ तुलनात्मक अध्ययन करने पर अनेक महत्वपूर्ण समानताएँ तथा कुछ मूलभूत भिन्नताएँ स्पष्ट रूप से सामने आती हैं। यद्यपि कांट का नैतिक दर्शन पाश्चात्य बौद्धिक परंपरा में विकसित हुआ और भारतीय दर्शन का विकास वैदिक, उपनिषदिक, बौद्ध, जैन तथा गीता की समृद्ध दार्शनिक परंपरा में हुआ, फिर भी दोनों का मूल उद्देश्य मानव जीवन को नैतिक, न्यायपूर्ण, उत्तरदायी और कल्याणकारी बनाना है। कांट ने नैतिकता का आधार कर्तव्य, विवेक और सार्वभौमिक नैतिक नियमों को माना, जबकि भारतीय दर्शन में धर्म, कर्म, अहिंसा, सत्य, करुणा, लोकसंग्रह, निष्काम कर्म तथा वसुधैव कुटुम्बकम् जैसे सिद्धांत नैतिक जीवन के आधार माने गए हैं। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण द्वारा प्रतिपादित निष्काम कर्मयोग का सिद्धांत यह शिक्षा देता है कि मनुष्य को फल की इच्छा का त्याग करते हुए अपने कर्तव्य का पालन करना चाहिए। यह विचार कांट के उस सिद्धांत से अत्यंत निकट है, जिसके अनुसार किसी कर्म का नैतिक मूल्य उसके परिणाम में नहीं, बल्कि कर्तव्य–बोध और सद्भावना में निहित होता है।[43] इसी प्रकार उपनिषदों में आत्मा की एकात्मकता, समस्त प्राणियों में एक ही चेतना का निवास तथा मानव मात्र के प्रति सम्मान की भावना व्यक्त की गई है, जो कांट के मानव गरिमा और प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं में साध्य मानने के सिद्धांत से गहरा साम्य रखती है। बौद्ध दर्शन की करुणा, मैत्री और समता तथा जैन दर्शन की अहिंसा, अपरिग्रह और अनेकांतवाद भी प्रत्येक व्यक्ति के सम्मान, सह–अस्तित्व और नैतिक उत्तरदायित्व पर बल देते हैं, जो आधुनिक मानवाधिकारों की भावना के अनुकूल हैं। भारतीय दर्शन में 'सर्वे भवन्तु सुखिनः', 'वसुधैव कुटुम्बकम' तथा 'लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु' जैसे आदर्श संपूर्ण मानवता के कल्याण और सार्वभौमिक बंधुत्व की स्थापना का संदेश देते हैं, जबकि कांट का 'विश्वनागरिकता' तथा 'शाश्वत शांति' का विचार भी वैश्विक नैतिक व्यवस्था और सार्वभौमिक मानव सम्मान की स्थापना का समर्थन करता है। यद्यपि दोनों परंपराओं में कुछ वैचारिक भिन्नताएँ भी हैं। कांट का नैतिक दर्शन मुख्यतः विवेक, व्यक्तिगत स्वायत्तता और सार्वभौमिक नैतिक नियमों पर आधारित है, जबकि भारतीय दर्शन में नैतिकता का आधार धर्म, आत्मबोध, कर्मफल, मोक्ष, आध्यात्मिक उन्नति तथा व्यक्ति और समाज के समन्वित विकास से जुड़ा हुआ है। भारतीय चिंतन अधिकारों की अपेक्षा कर्तव्यों पर अधिक बल देता है और यह मानता है कि जब प्रत्येक व्यक्ति अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करेगा, तब सभी के अधिकार स्वतः सुरक्षित हो जाएंगे। इसके विपरीत आधुनिक मानवाधिकार विमर्श में व्यक्तिगत अधिकारों और स्वतंत्रता को अधिक प्रमुखता दी जाती है।[44] इसके बावजूद दोनों परंपराएँ मानव गरिमा, नैतिक उत्तरदायित्व, सामाजिक न्याय, समानता, अहिंसा, मानव कल्याण तथा न्यायपूर्ण समाज की स्थापना को अपना साझा उद्देश्य मानती हैं। समकालीन वैश्विक संदर्भ में जब मानवता हिंसा, असमानता, पर्यावरणीय संकट, तकनीकी चुनौतियों, कृत्रिम बुद्धिमत्ता, नैतिक पतन और मानवाधिकारों के उल्लंघन जैसी जटिल समस्याओं का सामना कर रही है, तब कांट का कर्तव्यवाद और भारतीय दार्शनिक परंपरा का समन्वित अध्ययन एक ऐसी संतुलित, मानव–केंद्रित और मूल्य–आधारित नैतिक दृष्टि प्रदान करता है, जो अधिकारों और कर्तव्यों, व्यक्ति और समाज, स्वतंत्रता और उत्तरदायित्व तथा परंपरा और आधुनिकता के बीच समन्वय स्थापित करते हुए एक न्यायपूर्ण, समावेशी और विश्वकल्याणकारी समाज के निर्माण का सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रस्तुत करता है।[45]

समकालीन प्रासंगिकता इमैनुएल कांट का कर्तव्यवाद और मानवाधिकार संबंधी दार्शनिक दृष्टिकोण समकालीन वैश्विक परिदृश्य में अत्यंत प्रासंगिक और उपयोगी सिद्ध होता है, क्योंकि आज मानवता कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, संवैधानिक नैतिकता, डिजिटल अधिकार, पर्यावरणीय संकट, जलवायु परिवर्तन, सामाजिक असमानता तथा सतत विकास जैसी जटिल चुनौतियों का सामना कर रही है। कृत्रिम बुद्धिमत्ता के तीव्र विकास ने एल्गोरिदमिक पक्षपात, डेटा गोपनीयता, निगरानी, स्वचालित निर्णय–प्रक्रिया तथा मानव नियंत्रण जैसे अनेक नैतिक प्रश्न उत्पन्न किए हैं। कांट का यह सिद्धांत कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक साध्य है, साधन नहीं, यह सुनिश्चित करने की प्रेरणा देता है कि कृत्रिम बुद्धिमत्ता का विकास और उपयोग मानव गरिमा,

स्वायत्तता, पारदर्शिता, उत्तरदायित्व और न्याय के सिद्धांतों के अनुरूप हो।[46] इसी प्रकार जैव–नैतिकता के क्षेत्र में अंग प्रत्यारोपण, इच्छामृत्यु, जीन–संपादन, क्लोनिंग, प्रजनन प्रौद्योगिकी तथा चिकित्सकीय अनुसंधान जैसे विषयों पर निर्णय लेते समय कांट का कर्तव्यवाद यह अपेक्षा करता है कि प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्र सहमति और नैतिक अधिकारों का पूर्ण सम्मान किया जाए तथा किसी भी व्यक्ति का उपयोग केवल वैज्ञानिक या व्यावसायिक लाभ के साधन के रूप में न किया जाए। संवैधानिक नैतिकता के संदर्भ में भी कांट का दर्शन अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यह समानता, स्वतंत्रता, न्याय, मानव गरिमा, विधि के शासन तथा नैतिक उत्तरदायित्व को लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार मानता है। भारतीय संविधान में निहित मौलिक अधिकार, समानता, सामाजिक न्याय, धर्मनिरपेक्षता, संवैधानिक मूल्यों तथा प्रत्येक नागरिक के सम्मान की भावना कांट के नैतिक सिद्धांतों के साथ गहरा साम्य रखती है। इसी प्रकार सतत विकास लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केवल आर्थिक विकास पर्याप्त नहीं है, बल्कि सामाजिक न्याय, पर्यावरण संरक्षण, संसाधनों का न्यायपूर्ण उपयोग, लैंगिक समानता, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, स्वास्थ्य, शांति और उत्तरदायी संस्थाओं की स्थापना भी आवश्यक है। कांट का सार्वभौमिक नैतिक दृष्टिकोण प्रत्येक व्यक्ति, समाज और राष्ट्र को ऐसे निर्णय लेने की प्रेरणा देता है जो वर्तमान पीढ़ी के साथ–साथ भावी पीढ़ियों के अधिकारों और कल्याण की भी रक्षा करें।[47] इसके अतिरिक्त डिजिटल नैतिकता, साइबर सुरक्षा, पर्यावरणीय न्याय, कॉर्पोरेट उत्तरदायित्व, वैश्विक शासन, मानवाधिकार संरक्षण तथा अंतरराष्ट्रीय शांति जैसे समकालीन विषयों में भी कांट का कर्तव्यवाद नैतिक निर्णयों के लिए एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रदान करता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि कांट का नैतिक दर्शन केवल अठारहवीं शताब्दी तक सीमित नहीं है, बल्कि आधुनिक विज्ञान, प्रौद्योगिकी, लोकतंत्र, मानवाधिकार, संवैधानिक नैतिकता तथा सतत विकास की चुनौतियों के समाधान हेतु आज भी एक सार्वभौमिक, मूल्यपरक, न्यायसंगत और मानव–केंद्रित दार्शनिक दृष्टि प्रस्तुत करता है, जो एक उत्तरदायी, समावेशी और मानवीय विश्व व्यवस्था के निर्माण में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।[48]

आलोचनात्मक मूल्यांकन

कांट का कर्तव्यवाद आधुनिक नैतिक दर्शन की सबसे प्रभावशाली विचारधाराओं में से एक है, क्योंकि यह नैतिकता का आधार कर्तव्य, विवेक, सार्वभौमिक नैतिक नियम तथा मानव गरिमा को मानता है। प्रत्येक व्यक्ति को साधन नहीं, बल्कि अपने आप में साध्य मानने का उनका सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकार, लोकतंत्र, विधि के शासन, समानता, स्वतंत्रता और संवैधानिक नैतिकता के लिए एक सुदृढ़ दार्शनिक आधार प्रदान करता है।[49] तथापि, इस सिद्धांत की आलोचना भी की गई है कि यह नैतिक नियमों को अत्यधिक निरपेक्ष और कठोर रूप में प्रस्तुत करता है तथा वास्तविक जीवन की जटिल परिस्थितियों, भावनाओं, करुणा, सामाजिक संबंधों और कार्यों के परिणामों को अपेक्षित महत्व नहीं देता।[50] अनेक बार दो नैतिक कर्तव्यों के बीच उत्पन्न होने वाले संघर्षों के समाधान के लिए कांट का दृष्टिकोण पर्याप्त व्यावहारिक नहीं माना जाता। उपयोगितावादी विचारकों ने परिणामों की उपयोगिता को अधिक महत्वपूर्ण बताया, जबकि सद्‌गुण नैतिकता और नारीवादी दर्शन ने चरित्र, सहानुभूति, देखभाल तथा सामाजिक संदर्भों की उपेक्षा को इसकी सीमा माना है। भारतीय दार्शनिक परंपरा में भी कर्तव्य को धर्म, निष्काम कर्म, लोकसंग्रह, अहिंसा, करुणा और सर्वभूतहित के साथ जोड़कर अधिक व्यापक एवं मानवीय रूप प्रदान किया गया है।[51] इसके बावजूद कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, डिजिटल गोपनीयता, पर्यावरण संरक्षण, मानवाधिकार, सतत विकास तथा संवैधानिक नैतिकता जैसे समकालीन क्षेत्रों में मानव गरिमा, स्वायत्तता और नैतिक उत्तरदायित्व पर आधारित कांट का कर्तव्यवाद आज भी अत्यंत प्रासंगिक बना हुआ है। इसलिए यह कहा जा सकता है कि कांट का कर्तव्यवाद आधुनिक नैतिक चिंतन का एक सुदृढ़ आधार है, किंतु इसकी प्रभावशीलता तब और अधिक बढ़ जाती है जब इसे मानवीय संवेदनशीलता, सामाजिक न्याय, व्यावहारिक विवेक तथा समकालीन परिस्थितियों के अनुरूप समन्वित रूप में समझा और लागू किया जाए।[52]

कांट का कर्तव्यवाद और मानवाधिकार का अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि नैतिक जीवन का वास्तविक आधार केवल व्यक्तिगत हित, भावनाएँ अथवा किसी कार्य के परिणाम नहीं, बल्कि कर्तव्य, विवेक, सार्वभौमिक नैतिक नियम तथा प्रत्येक व्यक्ति की अंतर्निहित गरिमा है। कांट ने यह प्रतिपादित किया कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं में एक साध्य है और उसके साथ सम्मान, समानता तथा स्वायत्तता के आधार पर व्यवहार किया जाना चाहिए। यही सिद्धांत आधुनिक मानवाधिकारों, लोकतांत्रिक मूल्यों, विधि के शासन, संवैधानिक नैतिकता तथा सामाजिक न्याय की आधारशिला बनता है। यद्यपि उनके कर्तव्यवाद की कठोरता, परिणामों की उपेक्षा तथा व्यावहारिक सीमाओं को लेकर आलोचनाएँ की गई हैं, फिर भी मानव गरिमा, नैतिक उत्तरदायित्व और सार्वभौमिक नैतिकता की उनकी अवधारणा आज भी अत्यंत प्रासंगिक है। भारतीय दार्शनिक परंपरा के धर्म, निष्काम कर्म, अहिंसा, करुणा और लोकसंग्रह जैसे सिद्धांतों के साथ तुलनात्मक अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि नैतिकता का उद्देश्य केवल नियमों का पालन नहीं, बल्कि मानव कल्याण और सामाजिक समरसता की स्थापना भी है। वर्तमान समय में कृत्रिम बुद्धिमत्ता, जैव–नैतिकता, पर्यावरणीय संकट, मानवाधिकार संरक्षण, सतत विकास और वैश्विक न्याय जैसी चुनौतियों के संदर्भ में कांट का कर्तव्यवाद एक महत्वपूर्ण दार्शनिक आधार प्रदान करता है। अतः यह कहा जा सकता है कि कांट का नैतिक दर्शन केवल अठारहवीं शताब्दी का वैचारिक प्रतिपादन नहीं, बल्कि समकालीन विश्व में न्यायपूर्ण, मानवीय, उत्तरदायी और अधिकार–सम्मत समाज के निर्माण के लिए आज भी एक प्रेरणास्रोत एवं प्रासंगिक दार्शनिक दृष्टिकोण है।

संदर्भ सूची

1. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, इंडियन फिलॉसफी, खंड–2, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2008, पृ. 612–613.
2. शर्मा, चन्द्रधर, ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ इंडियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016, पृ. 382.
3. हिरियन्ना, एम., आउटलाइन्स ऑफ इंडियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2014, पृ. 356.
4. कांट, इमैनुएल, ग्राउंडवर्क ऑफ द मेटाफिजिक्स ऑफ मॉरल्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 2012, पृ. 37–38.
5. वही, पृ. 115–116.
6. कांट, इमैनुएल, द मेटाफिजिक्स ऑफ मॉरल्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1996, पृ. 179.
7. वही, पृ. 91.
8. वही, पृ. 108–109.
9. वही, पृ. 57.
10. ओश्नील, ओनोरा, बाउंड्स ऑफ जस्टिस, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 2000, पृ. 126.
11. सुलिवन, रोजर जे., एन इंट्रोडक्शन टू कांट्स एथिक्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1994, पृ. 45.
12. हिल, थॉमस ई., डिग्निटी एंड प्रैक्टिकल रीजन इन कांट्स मॉरल थ्योरी, कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस, इथाका, 1992, पृ. 74.
13. डोनली, जैक, यूनिवर्सल ह्यूमन राइट्स इन थ्योरी एंड प्रैक्टिस, कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस, इथाका, 2013, पृ. 23–24.

14. निकेल, जेम्स डब्ल्यू., मेकिंग सेंस ऑफ ह्यूमन राइट्स, ब्लैकवेल पब्लिशिंग, ऑक्सफोर्ड, 2007, पृ. 41–42.
15. इशाय, मिशेलीन आर., द हिस्ट्री ऑफ ह्यूमन राइट्स, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले, 2008, पृ. 45.
16. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, पूर्वोक्त, पृ. 49.
17. संयुक्त राष्ट्र, यूनिवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स, संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन, न्यूयॉर्क, 1948, अनुच्छेद 1–30, पृ. 11.
18. भारत सरकार, भारत का संविधान, विधि एवं न्याय मंत्रालय, नई दिल्ली, नवीनतम संस्करण, भाग–III (पृ. 15–35) एवं भागदृप्ट, पृ. 36.
19. सेन, अमर्त्य, द आइडिया ऑफ जस्टिस, पेंगुइन बुक्स, लंदन, 2009, पृ. 18—19.
20. नुसबाम, मार्था सी., फ्रंटियर्स ऑफ जस्टिस, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 2006, पृ. 69–70.
21. फ्रीमन, माइकल, ह्यूमन राइट्स, पॉलिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 2017, पृ. 32–34.
22. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, पूर्वोक्त, पृ. 46.
23. गांधी, मोहनदास करमचंद, हिन्द स्वराज, नवजीवन पब्लिशिंग हाउस, अहमदाबाद, 2009, पृ. 51—52.
24. विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स ऑफ स्वामी विवेकानन्द, अद्वैत आश्रम, कोलकाता, खण्ड–1, पृ. 124.
25. यूनेस्को, ह्यूमन राइट्स: क्वेश्चन्स एंड आन्सर्स, यूनेस्को पब्लिशिंग, पेरिस, 2006, पृ. 11—12.
26. कांट, इमैनुएल, पूर्वोक्त, 2012, पृ. 37.
27. वही, पृ. 110–111.
28. वही, पृ. 180.
29. वही, पृ. 93–94.
30. पैटन, एच. जे., द कैटेगॉरिकल इम्परेटिव, यूनिवर्सिटी ऑफ पेनसिल्वेनिया प्रेस, फिलाडेल्फिया, 1971, पृ. 102.
31. वुड, ऐलन डब्ल्यू., कांट्स एथिकल थॉट, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1999, पृ. 108.
32. कोर्सगार्ड, क्रिस्टीन एम., क्रिएटिंग द किंगडम ऑफ एंड्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1996, पृ. 57–58.
33. ओश्नील, ओनोरा, पूर्वोक्त, पृ. 121.
34. सुलिवन, रोजर जे., एन इंट्रोडक्शन टू कांट्स एथिक्स, कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1994, पृ. 45.
35. हिल, थॉमस ई., पूर्वोक्त, पृ. 74.
36. डोनली, जैक, पूर्वोक्त, पृ. 110.
37. निकेल, जेम्स डब्ल्यू., पूर्वोक्त, पृ. 39.
38. बिएट्ज, चार्ल्स आर., द आइडिया ऑफ ह्यूमन राइट्स, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 2009, पृ. 49.
39. इशाय, मिशेलीन आर., पूर्वोक्त, पृ. 74.
40. फ्रीमन, माइकल, पूर्वोक्त, पृ. 145.
41. गेविर्थ, ऐलन, ह्यूमन राइट्सरू एसेज ऑन जस्टिफिकेशन एंड एप्लिकेशन्स, यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस, शिकागो, 1982, पृ. 19–20.
42. रॉल्स, जॉन, ए थ्योरी ऑफ जस्टिस, हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1999, पृ. 46.
43. सेन, अमर्त्य, पूर्वोक्त, पृ. 112.
44. नुसबाम, मार्था सी., पूर्वोक्त, पृ. 165.
45. संयुक्त राष्ट्र, यूनिवर्सल डिक्लेरेशन ऑफ ह्यूमन राइट्स, संयुक्त राष्ट्र प्रकाशन, न्यूयॉर्क, 1948, अनुच्छेद 1–30, पृ. 11.
46. भारत सरकार, भारत का संविधान, विधि एवं न्याय मंत्रालय, नई दिल्ली, नवीनतम संस्करण, भाग प्प्, पृ. 15–16य भाग IV, पृ. 36–52; भाग IV ।, पृ. 52–53
47. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, पूर्वोक्त, पृ. 612.
48. शर्मा, चन्द्रधर, ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ इंडियन फिलॉसफी, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, 2016, पृ. 382.
49. हिरियन्ना, एम., पूर्वोक्त, पृ. 356.
50. गांधी, मोहनदास करमचंद, पूर्वोक्त, पृ. 51–52.
51. विवेकानन्द, स्वामी, द कम्प्लीट वर्क्स ऑकांट का